International Journal of Applied Research 2019; 5(3): 288-292

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2019; 5(3): 288-292
www.allresearchjournal.com
Received: 26-01-2019
Accepted: 27-02-2019

संजय कुमार
शोधार्थी (हिन्दी विभाग), ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, कामेश्वर नगर, दरभंगा, बिहार , भारत

Correspondence
संजय कुमार
शोधार्थी (हिन्दी विभाग), ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, कामेश्वर नगर, दरभंगा, बिहार , भारत

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में नारी संवेदना और यथार्थ

संजय कुमार

सारांश
समकालीन हिन्दी उपन्यासों में मैत्रेयी पुष्पा का नाम अग्रगण्य रहा है। मैत्रेयी पुष्पा प्रतिभा संपन्न उपन्यासकार रही हैं। इनके उपन्यास अपने सरोकारों में नारी संवेदना और यथार्थ की दिशा में महत्त्वपूर्ण आयाम खोले हैं। लेखिका ने नारी चरित्र के अंतर बाह्य रूप को मानवीय जीवन दृष्टि के आलोक में मानवोचित यथार्थ के धरातल पर परखा है। मैत्रेयी पुष्पा ने नारी की दुःख–दर्द, संताप, पीड़ा, संवेदना, रूढ़ व्यवस्था की दास्तान पुरानी परम्पराओं एवं शोषण की शिकार तथा उसकी जकड़न में कसमसाती हुई संवेदनशील नारी का यथार्थ अंकन अपने प्रमुख उपन्यासों में की है। भ्रष्ट प्रतिमानों की दासतां एवं पुरानी रूढ़ परम्पराओं, शोषण से मुक्ति का रास्ता तलाशती मुख्यतः 'इदन्नमम्' की मंदा, कुसुमा, प्रेमा तथा 'बेतवा बहती रही' की उर्वशी और 'विजन' की डॉ० नेहा तथा डॉ० आभा आदि नजर आती है। इन महिलाओं का पुरानी रूढि परम्पराओं एवं शारीरिक मानसिक शोषण तथा–कुरीतियों के खिलाफ संघर्ष की गाथा को मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यासों में बेबाकी से अंकन किया है। मैत्रेयी पुष्पा की नारी पात्र पुरातन से चली आ रही आदर्श प्रवृति 'पुरुषों के अधीन रहना' को उखाड़ फेंकती है। अपने जीवन में आये कटीलेदार रास्तों को पार करके आगे बढ़ती हुई दिखाई देती है। इतना ही नहीं मध्ययुगीन संस्कारों की खोज से बाहर आकर नए सिरे से नए तरीके से अपने और अपने आस–पास की परिवेश को समझना चाहती है। सदियों से लदी पुरुष प्रधान संस्कृति को विरोध कर अपने व्यक्तित्व के अस्तित्व के लिए लड़ाई लड़ती हुई दिखाती है। परंपरागत संस्कृति और साहित्य में वर्तमान विचारधारा से उत्पन्न परिवेशजन परिवर्तन को रेखांकित कर कथा साहित्य में नारी जीवन की अनुभूति और कल्पित पक्षों का क्रांतिकारी अभिव्यक्ति के कारण मैत्रेयी पुष्पा जी के उपन्यासों में नारी की संवेदना और यथार्थ दो मूलभूत पक्ष बनकर उभरे हैं।

भूमिका

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्र फलाः क्रियाः।। [1]

अर्थात् जहाँ स्त्रियाँ का आदर किया जाता है, वहाँ देवता निवास करते हैं और जहाँ इनका अनादर होता है, वहाँ सब कार्य निष्फल होते हैं।

नारी स्वंय शक्ति का एक रूप है। वह मनुष्य जाति में ऊर्जा प्रवाह का प्रमुख माध्यम है, जिसके बिना संरचना, पोषण, रक्षा और आनंद की कल्पना नहीं की जा सकती है। भारतीय धर्म शास्त्र में देवी माँ दुर्गा के माध्यम से नारी– शक्ति की महत्ता स्थापित की गई है। ये एक ऐसी शक्ति है, जिसके बिना भविष्य की आशा ही नहीं की जा सकती और न ही कभी सम्पूर्ण पोषण को प्राप्त किया जा सकता, शुरुआती जीवन उत्पत्ति के समय रक्षा का एहसास बिना इस शक्ति के अधूरा है। साथ ही सांसारिक जीवन जीते हुये आनंद की कल्पना की जा सकती है।

नारी समस्त मानवीय सौन्दर्य एवं चेतना की सर्वोत्तम अभिव्यक्ति है। साहित्य की प्रत्येक विधाओं में नारी शक्ति एवं जीवन प्रदायिनी ऊष्मा सक्रिय रही है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने सृष्टि एवं सर्जन में नारी की महत्त्वपूर्ण भूमिका को रेखांकित करते हुए कहा है कि, "पुरुष स्वभावतः निःसंग व तटस्थ होता है, नारी ही उसमें आसक्ति उत्पन्न कर उसे नवनिर्माण के प्रति उन्मुख करती है, पुरुष अपनी प्रकृति के कारण द्वंद्व रहित हो सकता है लेकिन नारी अतिशय भावुकता के कारण सदैव द्वन्द्वोन्मूखी रहती है। इसीलिए पुरुष मुक्त है और नारी बद्ध है।" [2]

यदि जयशंकर प्रसाद नारी को केवल श्रद्धा स्वरूप मानते हैं, तो मैथिलीशरण गुप्त जी के लिए वह आँचल में दूध और आँखों में पानी लिए त्याग की साकार मूर्ति है। महादेवी वर्मा का कथन है कि "नारी का मानसिक विकास पुरुष के मानसिक विकास से अधिक द्रुतगति से होता है। उसका स्वभाव कोमल और प्रेम, घृणा आदि भाव अधिक तीव्र और स्थायी होते हैं। इन दोनों प्रवृतियों में उतना ही अंतर है जितना विद्युत और झड़ी में। एक से शक्ति उत्पन्न की जा सकती है किन्तु प्यास नहीं बुझाई जा सकती। दूसरी से शान्ति मिलती है परन्तु पशुबल की उत्पत्ति संभव नहीं।" [3]

नारी ने मानव जीवन के सभी क्षेत्रों को अपनी दया, माया, ममता, मधुरिमा, अगाध विश्वास और समर्पण से अभिषिक्त किया है। इतिहास के किसी कालखंड में यदि उसने पुरुष की कोमल भावनाओं को उभारा है, तो कभी उसे जीवन संग्राम में जूझने का दृढ़संकल्प और आत्मोत्सर्ग की प्रेरणा भी दी है। यही कारण है कि भारतीय समाज में नारी की स्थिति युगीन आदर्शों और जीवन मूल्यों के साथ–साथ परिवर्तित होती रहती है। छायावादी कविवर सुमित्रानंदन पंत ने भी नारी को देवी, माँ, सहचरी, प्राण, से संबोधित कर प्रतिष्ठित किया है। मैत्रेयी पुष्पा प्रतिभा संपन्न उपन्यासकार रही हैं। इनके उपन्यास अपने सरोकारों में दलित चेतना, प्रकृति चेतना, नारी चेतना की दिशा में महत्त्वपूर्ण आयाम खोलें हैं। मैत्रेयी ने अपने उपन्यासों में नारी चरित्र के अंतरबाह्य रूप को स्थितिप्रज्ञ मानवीय जीवन दृष्टि के आलोक में मानवोचित यथार्थ के धरातल पर परखा है। मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में अंकित नारी की दुःख, दर्द, संताप, पीड़ा, संवेदना, रूढ व्यवस्था की दास्तान, पुरानी परम्पराओं एवं शोषण की शिकार तथा उसकी जकड़न में कसमसाती हुयी संवेदनशील नारी का यथार्थ अंकन हुआ है। भ्रष्ट प्रतिमानों की दास्तां एवं पुरानी रूढ़ परम्पराओं, शोषण से मुक्ति का रास्ता तलाशती मुख्यतः 'इदन्नमम्' की मंदा, कुसुमा, प्रेमा तथा 'बेतवा बहती रही' की उर्वशी 'चाक' की सारंग, 'झूलानट' की शीलो, 'अल्माकबूतरी' की अल्मा, 'अगनपाखी' की भुवन, 'त्रियाहठ' की उर्वशी और 'विजन' की डॉ० नेहा तथा डॉ० आभा आदि नजर आती है। इन महिलाओं का पुरानी रूढ़ि परम्पराओं एवं शारीरिक मानसिक शोषण तथा कुरीतियों के खिलाफ संघर्ष की भूमिका का मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में बेबाकी से अंकन हुआ है। मैत्रेयी पुष्पा का मानना है कि– "स्त्री कोई जाति नहीं होती, स्त्री का कोई धर्म नहीं होता, जिस घर में जन्म हुआ वही धर्म बना जिसमें ब्याहा गया वही धर्म हो गया। शूद्रों के लिए सेवा धर्म है, क्षत्रियों के लिए रक्षा धर्म है, वैश्यों के लिए व्यापार धर्म बताया गया है, पर स्त्री का कोई धर्म नहीं क्योंकि इसका आधार वर्ण नहीं, जाति नहीं, व्यवसाय नहीं, शुद्ध लैंगिक भेद है।" [4] स्त्री के लिए स्वतंत्र विचार शैली विकसित नहीं हुई है। उसे वस्तु कि तरह माना गया, उपयोग में लाया गया है। पुरुष का स्त्री पर सदेव वर्चस्व रहा है। इसीलिए मैत्रेयी पुष्पा ने नारी के संदर्भ में समय तथा समाज के यथार्थ जैसे गंभीर मसलों को लगातार उठाया है। अपने उपन्यासों में नारी के भोगे हुये यथार्थ को प्रदर्शित किया है। आधुनिक युग में हर व्यक्ति कि यह कोशिश है कि वह सफल, सुखमय जिंदगी जिये। मैत्रेयी पुष्पा ने इस तरह के विचार अपने कृतियों के माध्यम से पाठकों के सम्मुख रखना चाहा है। जिससे पाठकों कि चेतना जागृत हो सके।

मैत्रेयी पुष्पा अपने उपन्यास 'अल्मा कबूतरी' की अल्मा और 'चाक' के नैनी सारंग के माध्यम से यह दिखाने की पुरजोर कोशिश की है कि पुरातन से चली आ रही आदर्श प्रवृति 'पुरुषों के अधीन रहना' को उखाड़ फेंकती है, अपने जीवन में आए कटीलेदार रास्तों को पार कर के आगे बढ़ती हुयी दिखाई देती है। इतना ही नहीं वह अपने मध्ययुगीन संस्कारों की खोज से बाहर आकर नए सिरे से नए तरीके से अपने और अपने आस–पास के परिवेश को समझना चाहती है। सदियों से लदी पुरुष प्रधान संस्कृति का विरोध कर वह अपने व्यक्तित्व के अस्तित्व के लिए लड़ाई लड़ रही है। परंपरागत संस्कृति और साहित्य में वर्तमान विचारधारा से उत्पन्न परिवेश जन्य परिवर्तनों को रेखांकित कर कथा साहित्य में नारी जीवन के अनुभूति और कल्पित पक्षों पर क्रांतिकारी अभिव्यक्ति के कारण मैत्रेयी पुष्पा जी के उपन्यासों में नारी की संवेदना और यथार्थ दो आयाम बन कर उभरे हैं।

उपन्यासकार मैत्रेयी पुष्पा जी के लेखन में पुरुष समाज द्वारा स्त्री पर होने वाले अत्याचारों का अंकन है। 'इदन्नमम्', 'चाक', 'झूलानट', 'अल्मा कबूतरी', 'कस्तुरी कुंडल बसे' आदि रचनाओं के माध्यम से पुरुष समूह द्वारा बनाई गई 'नैतिक संहिताओं' में जकड़ी नारी की नियति का बेजोड़ चित्र प्रस्तुत करती है। उनके उपन्यास में जन्म पाने वाली नारियाँ, नारी समस्या की समस्त मान्यताओं को चुनौती देने लगती है। उस धर्म, दर्शन, चिंतन समाज के विरुद्ध खड़ी रहती है जो उसे दबाये रखना चाहती है। मैत्रेयी पुष्पा की नायिका पति प्रिया नहीं है ना ही वह पति द्वारा बनाये गये घर में मन मसोस कर जीना चाहती है वह नत–नेत्र और सलज्ज स्त्री की भूमिका में नहीं जीना चाहती हैपतिव्रता धर्म लेखिका को सजा लगता है उनकी नारी पात्र आत्मस्वाभिमान एवं परिस्थिति के साथ साहस से सम्झौता करने वाली नजर आती दिखती है। उनकी कृतियों में नारी ख्यालों की स्वप्न परी नहीं है, वह परिस्थितियों को हर हाल में झेलती हुयी नजर आती है। यही कारण है कि उनकी कृतियाँ स्वयं एक प्रेरणा है, लेकिन वह जानती है कि जिस प्रकार नारी को एक पुरुष कि आवश्यकता होती है, उसी प्रकार पुरुष कोभी स्त्री की आवश्यकता होती है वह समानता चाहती है। वह स्त्री शक्ति को जानती है उसे उजागर करने की कोशिश कर देना चाहती है।

मैत्रेयी पुष्पा जी एक प्रसिद्ध लेखिका है। उसने अपने उपन्यासों में बुंदेलखंड और विन्ध्यांचल की समस्याओं विशेष कर वहाँ के समाज में व्याप्त नारी जीवन की समस्याओं से ही अपने कथ्य का ताना बाना बुना है। उन्हौनें सामाजिक कुरीतियों पर तीखे प्रहार कर कतिपय यथार्थ और युगानुरूप सार्थक समाधान प्रस्तुत किए हैं। वैसे तो उनके उपन्यासों का फलक बहुत विस्तृत है जिसमें वे समाज की व्यक्तिक, सामूहिक, ग्रामीण, नागरिक, राजनीतिक, आर्थिक सभी प्रकार की समस्याओं से सीधे टकराते हुये कोई न कोई तर्क संगत हल खोजने के लिए सक्रिय हो उठते हैं, लेकिन उनकी पुष्टि युग–युग से उपेक्षित, पीड़ित व शोषित, भारतीय नारी की उन समस्याओं पर ही आकर पुनः टिक जाती है जिनके कारण भारतीय समाज आज भी पिछड़ा हुआ है। उनकी दृष्टि में नारी जीवन के अभिशप्त होने का मूल कारण यही है कि आज भी नारी पूर्ण रूप से आत्मनिर्भर नहीं है और जब तक इस धरातल पर स्वावलंबी नहीं होगी तब तक उसकी यातनाओं का अंत नहीं होगा। अपने इसी दृष्टिकोण को आधार बनाकर मैत्रेयी जी ने कस्तुरी, मंदा, कदम बाई, डॉ० आभा, डॉ नेहा जैसे नारी पात्रों का गठन किया है जो अपनी बुद्धि कौशल से अपनी कठिन परिस्थितियों तथा अधिक दुर्बलताओं को दूर करने के लिए प्रयत्नशील है। आज की नारी पुरुष के साथ कंधा से कंधा मिलाकर चलना चाहती है। वह हर क्षेत्र में पुरुष के बराबर ही नहीं बल्कि आगे भी निकलती जा रही है अब लड़के लड़की में भेद मिटता जा रहा है। भौतिकता की इस चकाचौंध में आज माँ–बाप को वृद्धावस्था में प्रवेशोपरान्त सेवा–सुश्रुवा में बेटा के अपेक्षा बेटी ही कर्तव्यनिष्ठ दिखती है जिससे बेटी के प्रति समाज का नजरिया बदला है। लेखिका कहती है "माता–पिता की चिंता करने वाली डॉ० आभा का क्या हाल हुआ? विशाल अपनी पत्नी के साथ अमेरिका गया था, एयरपोर्ट पर उसने विशाल से कहा था– जा भईया लड़की की तरह विदा हो जा, मुझे छोड़े जा रहे हैं न यहाँ लड़के की तरह। डोंट वरी आइ एम हेयर। आई एम ऑल्वेज विद मायी पैरेंट्स। मै हमेशा अपने माता–पिता के साथ हूँ।" [5]

मैत्रेयी पुष्पा के अनुसार चाँदी के आठ सौ सिक्के पर तुलने वाली कस्तुरी वैधव्य की यातना से छूटकारा पाने के लिए, पढ़ लिखकर नौकरी करने का जो रास्ता अपनाती है, उससे क्या मर्द समाज की चौखटों से मुक्ति मिली? नौकरी की बरकरारी और तरक्की के लिए माँ को यदि मर्दों का ही कृपाकांक्षी होना है तो मैत्रेयी क्यों करे नौकरी? यही वह परिस्थितियाँ है जिससे वह नौकरी नहीं शादी में अपनी मुक्ति का रास्ता तलाशती है। यही स्त्री मुक्ति के प्रति–विमर्श है जो सिद्धांतों से गढ़ा न होकर पारंपरिक भारतीय समाज की उन सच्चाईयों में कढ़ा है जहां आर्थिक रूप से निर्भर होकर भी कामकाजी स्त्रियाँ की कोई पहचान नहीं है इस समाज में वह पुरुष तो क्या, औरत भी नहीं, रांड है, विधवा है, बस।

पुरुषों जैसे काम करने से पुरुषों जैसे नहीं मान ली जाती स्त्री। सामाजिक कार्यों के चलते उसे किसी पुरुष की जरूरत होती है, भले ही वह पाँच या दो साल का हो।" [6]

मैत्रेयी पुष्पा ने राजनीति को स्त्री का क्षेत्र माना है। जब तक स्त्री अपने हकों के प्रति सचेत होकर राजनीति से जुड़ नहीं जाती तबतक अन्याय दूर नहीं होंगे। हमें अपने हक खुद प्राप्त करने होंगे। कोई बाहर वाला आकार हमें अपने हक नहीं देंगे। इसीलिए लड़ाई लरनी है। सामाजिक, आर्थिक, साहित्यिक क्षेत्र में अपने आपको उबारना होगा, हमारा कहना सामने रखना होगा। आज तक जो चित्रण हुआ वह पुरुषों द्वारा होता रहा, हमें अपने अनुभव खुद लिखने होंगे। धर्म, दर्शन, अर्थ, संस्कृति, भाषा, कला, साहित्य, संगीत, संवेदना के क्षेत्र में अपने आपको प्रस्तुत करना होगा। कुल मर्यादा का रक्षण करती नारी सुरक्षित नजर आती है। मैत्रेयी पुष्पा की नारी 'बोल्ड' अर्थात् अंदरूनी मजबूती से सामने आती है, अपनी बात रखती है उस पर अमल करती है। मैत्रेयी की सीता पहले शूर्पनखा की रक्षणकर्ता है। स्त्री ही स्त्री का शत्रु है का नारा यहाँ गलत साबित होता है।

मैत्रेयी पुष्पा की रचना विधान नारी की संवेदना और यथार्थ से लबालब भरा है। उनकी नारी लोकतन्त्र की मांग करती है जहां स्त्री और पुरुष में किसी प्रकार का विभेद न किया जाय, जितना हक अधिकार पुरुष को अपने कार्य व कर्तव्य पथ पर आगे बढ़ने के लिए है उतना ही स्त्री को मिलना चाहिए। 'इदन्नमम्' की नायिका मंदा में राजकिशोर युवा गांधी को देखते हैं उनका कहना है कि, "सोनपुरा में मंदा कि स्थिति बहुत कुछ ऐसी है जैसे दक्षिण अफ्रीका में युवा गांधी की रहती होगी। संघर्षों को समझना, फिर छोटी–छोटी लड़ाइयाँ जीतते हुये अंततः सम्पूर्ण जनसामान्य को संगठित करके विद्रोह करना, मंदा के जरिये मैत्रेयी की नेतृत्व क्षमता का सुंदर ज्ञापन है।" [7]

'चाक' की सारंग की रणनीतियों ने सामाजिक जड़ता को न केवल तोड़ा है, बल्कि एक हलचल पैदा की है। चर्चित समीक्षक मधुरेश के अनुसार मैत्रेयी पुष्पा का नारी चेतना वह नहीं है जिसकी परिणति पुरुषों के विरोध में जाती है। सारंग अपने नकारा और मक्कार पति से भरसक निर्वाह के प्रयास करती है। विचारों के चाक पर चढ़ाकर उसे पुनर्जन्म देने वाला श्रीधर उससे प्रेम और सम्मान का अधिकार है ही।" [8]

पुरुष षड्यंत्र किस प्रकार नारी को शोषण और यंत्रणाओं की गिरफ्त में फँसते हुये उसे मृत्यु के मुख में धकेलता है। यह 'बेतवा बहती रही' में बारीकियों से चित्रित हुआ है। उदय प्रकाश कहते हैं कि– "स्त्री के अनवरत अपमान का एक पूज्य पर्याय है सीता। सीता एक अनवरत राम कहानी है। इस राम कहानी को मैत्रेयी पुष्पा ने 'बेतवा बहती रही' नाम से लिखा है। वे इस महत्त्वपूर्ण रचना को जाति, चलन और पुरुष वाचाल के विचलन कि कथा मानते हैं।" [9]

उपन्यास 'झूलानट' के माध्यम से कह सकते है कि 'त्रिया हठ' की नीतियों का एक तरह से पूर्ण या चरम उत्कर्ष है। वैसे भी किस क्षेत्र में बेहतरी या परिष्कार या संतुलन के लिए या तो पुराने का ध्वंस करते हुए नयी संरचनाएँ गढ़नी होती है या अगर परिस्थितियों विषय और ऐसी है जहां पर सीधे सीधे या आमने सामने दो दो हाथ नहीं हो सकते, वहाँ भेद नीति से काम लेना बुद्धिमता है, नारी कैसे पुरुष की व्यवस्था में पुरुष से जीते या अपने हक–हुकूमत की बात रखे। जहां सिरे से सब कुछ उसके प्रतिपक्ष में है वहाँ अगर नीति से काम लेकर सामने वाले की नाक में नकेल डालती है तो बुरा क्या है, "झूलानट की शीलो ने इसी नीति और युक्ति की सहायता से अपनी जंग लड़ी। स्त्री रणनीति के हिसाब से यह एक पाठ है। विसंगतियों से लोहा लेने की यही तो एक जाग्रांतहै, एक गाँव के नारी की चूंकिस्त्रियाँ के संपत्ति संबंधी अधिकार को लेकर कई तथ्य सामने आते हैं इस उपन्यास में।" [10]

'त्रिया हठ' में मैत्रेयी पुष्पा ने विलुप्त हुये एक स्त्री की पहचान के कटे–फटे अवशेषों को एकत्र कर के उपन्यास को कई शीर्षक में तो बांटा ही है साथ ही बरजोर सिंह के मन और घर में जगह बनाती उर्वशी को डायन, चुड़ैल, रांड़ कहकर कोसने वाली मीरा की दादी भी स्वीकार कर लेती है, धनी मेरे पीछे हमारी देह नहीं मर जाती हम जानते हैं, काये से की हमने खुद भुगता है। यह उपन्यास स्त्री के अधिकारों की बात उठाता है चाहे वह जमीन में हिस्से की बात हो, चाहे जीवन में। अपने उपभोग से त्रस्त उर्वशी बरजोर सिंह से यही तो चाहती है, "मैं तुमसे कोई वचन नहीं माँग रही फूफा न कोई धन दौलत चाहिए। बस मेरे साथ खड़े हो जाओ। मुझे तुम्हारी जरूरत है।" [11]

लोकोपवाद और पंचायत के प्रपंच में आनंद लेते लोग उर्वशी की जरूरत यह नहीं समझते स्मिता के हस्तक्षेप के बहाने मैत्रेयी ने समाज में पंचायतों की भूमिका की कसौटी पर कसा है और उर्वशी को गुड़िया और इमराना तक परिभाषित कर दिया है। उर्वशी बरजोर के घर क्यों रहती है और क्या करती है। मीरा के बेचौन शब्द हैं– "उर्वशी से मनमानी सेवा लो मेहनत करा लो, आनंद पाओ। परंतु इन सब के बावजूद मैत्रेयी ने त्रियाहठ के प्रसंगानुसार सहजतापूर्वक उन सारे वर्तमान प्रश्नों को रेखांकित किया है, जिनमें जीवन आक्रांत है। जैसे स्त्रियाँ का जमीन में हिस्सा, बेरोजगारी, स्त्री शिक्षा, पंचायत चुनाव में महिला आरक्षण, डाकू समस्या, ग्रामीण व्यवसाय पर पुरुषों की प्रेतछाया इत्यादि। एक रचनाकार के रूप में मैत्रेयी पुष्पा स्त्री स्मिता उसके आबरू की रक्षा का युद्ध लड़ रही है उसकी नैतिकता सर्वाधिक मूल्यवान है।"

शीलो देश की आजादी के पचास वर्ष बाद यानि पचास वर्षों के जंतान्त्रिक भारतीय समाज में जन्मी, पली और बढ़ी औरत है। इसीलिए वह अपने व्यक्तित्व और अधिकार को स्थापित करना अच्छी तरह से जानती है वह इस दौड़ की औरत है जब बड़े पैमाने पर स्त्रियाँ अपने अधिकार के लिए लड़ रही है और हासिल भी कर रही है। वह अधिकार की पेचीदगियों को बहुत अच्छी तरह समझती है। तभी तो सुमेर दरोगा से कह देती है, "बाल किशन तो ऐसे ही हमारे लिए, जैसे तुम्हारे लिए तुम्हारी दूसरी औरत। बिन ब्याही मनमर्जी की।" इस कथन का गहरा अर्थ है नारी स्वतंत्रता के लिए। यह है इतिहास के उस प्रश्न का उत्तर कि क्यों पुरुष पत्नी के अतिरिक्त भी यौन संबंध रख सकता है? स्त्री रखे तो उसे प्रताड़ित और लांछित क्यों किया जाये?

इस प्रकार सोच रखती है एक शीलों जैसी गंवई औरत जो अपने जंतान्त्रिक अधिकार के प्रति जागरूक और समर्थ है। ऐसी नारी चेतना के कारण ही तो दूसरों को सताने वाला दारोगा ताकता रह जाता है। वह अपने स्वार्थ के अनुसार शीलो का शोषण नहीं कर पाता। इतना ही नहीं शीलों बिरादरी से भी नहीं डरती है। यही कारण है कि वह बालकिशन को पति के रूप में अपनाकर भी बुंदेलखंड के रिवाज के मुताबिक बछिया–दान करने से इंकार कर देती है। सास को साफ कह देती है कि मैं बछिया दान नहीं करा सकती हूँ। शीलो के विचार से समकालीन परिवेश की नारी के यथार्थ का पता चलता है। नारी को आज के परिवेश में शोषण करना संभव नहीं है और यह भी की स्त्री–पुरुष संबंध को विवेकपूर्ण ढंग से संतुलित करना बहुत कठिन है। व्यक्तित्व का टकराव होता रहता है, केवल मध्य वर्ग या उच्च वर्ग में नहीं, निम्न वर्ग में भी। मैत्रेयी पुष्पा जी यह भी कहीं है कि सेक्स के बारे में धारणा बदलनी होगी स्त्री पुरुष के अवांतर सेक्स सम्बन्धों को लेकर नैतिकता का हंगामा खड़ा करना नुकसानदेह है।

हिन्दी के आधुनिक उपन्यासकार नारी के प्रति सदैव सजग रहने वाली छुई–मुई नैतिकता के बंधन से अपने को मुक्त कर चुके हैं। परंतु स्वस्थ काम चेतना के आधार पर विकासशील व्यक्तित्व की विराट संभावनाओं को व्यक्त करने में वे असमर्थ रहे हैं। आज के उपन्यास की दृष्टि नारी की अंगभंगिमाओं में उलझकर रह गयी है। और वह समाज के द्वंदात्मक विकास के मूल शक्तियों से

अपरिचित ही रह गया। काम चेतना मनुष्य की अनेक विकासशील और सृजनशील प्रवृतियों के रूप में व्यक्त होती है। मैत्रेयी के पात्र जन जीवन के प्रतिनिधि नहीं है। वे उस वर्ग के लोग हैं जिनके लिए सेक्स और आत्मपीड़ा की समस्याएँ प्रधान है। वीरेंद्र यादव के अनुसार– "मैत्रेयी पुष्पा के लेखकीय व्यक्तित्व का सर्वाधिक सकारात्मक पहलू यह है कि वे जिस स्त्री संस्कार को अपने लेखन में केन्द्रीयता प्रदान करती है व कमोबेश उनके अपने अनुभव संसार में शामिल रहा है। कभी कभी अविश्वशनीय व अतार्किक कहे जाने का जोखिम उठाकर भी वे जिन स्त्री पात्रों को रचती रही हैं, वे जिस खाद बीज से निर्मित हुये हैं, उसका पता हमें उसके इस आत्मकथा उपन्यास से मिलता है।..... महिला लेखिकाओं के कथा साहित्य में सैक्स और इनसेस्ट के प्रसंगों में लेखिका के अंतरंग जीवन के सूत्र तलाशने वाले पुरुष रतिकों के लिए मैत्रेयी पुष्पा अपने आत्मकथा में कुछ भी नहीं छुपाती। यहाँ तक विवाह कि सुख सेज से 'साफ सुथरी उठने के कारण' पति के मन में अपने कौमार्य को लेकर उठे संदेह को भी वे नारी विमर्श का मुद्दा बनाती है।" [12]

इतना ही नहीं मैत्रेयी पुष्पा आगे कहती है कि सतमासी बेटी के जन्मे, बेटी के पितृत्व को लेकर पति के मन में उठे संशय पर स्वंय टिप्पणी करती है– अन्य पतियों के तरह मेरे पति भी अपने वंश और पीढ़ियों के प्रति खुद को सत्यनाश का अपराधी मान रहे हैं। इस समूचे मुद्दे पर तर्क वितर्क करते हुए– मैत्रेयी पुष्पा का स्त्री पक्ष की ओर से प्रति प्रश्न है कि, "जो पुरुष स्वंय इस बच्ची का पिता होने में हिचक मान रहा है, उसे वह पति भी कैसे माने।" [13]

मैत्रेयी पुष्पा जी की आत्मकथा से स्पष्ट है कि उनकी लेखन केवल सिद्धान्त या आलेख मात्र न होकर उनकी लेखन शैली को बोल्डनेस प्रदान करती है तभी तो अपने पति और माँ तक को नहीं छोडती है, उन्हें भी कटघरे में खड़ा करती है।

'इदन्नमम्', 'चाक' की भांति दुनियाँ की शायद ही कोई ईमानदार नारी कथा हो जो अंततः सैक्स कथा न हो, जिस समाज में हजारों सालों से नारी की सिर्फ सैक्स करने भर के लिए रखा गया हो, वहाँ सैक्स विहीन नारी कथा या तो हवाई आदर्शवाद है या जान बुझ कर गढ़ा गया झूठ। मैत्रेयी की कथा नारियां अपनी पूरी शारीरिकता के साथ जीने के संकल्प को ही अपना कथ्य बनाती है। उनकी गोमा, शीलो, मंदा, सारंग, कुसुमा, अल्मा आदि नारी पात्र जिजीविषा की ऐसी दबंग अभिव्यक्ति है जहां श्लील–अश्लील, नैतिक, अनैतिक की धारणाएँ सहज ही केंचुली की तरह उतर जाती है।" [14]

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों की नारी पात्राएँ परम्परागत विचारधाराओं और रूढ़िवादिताओं का खंडन कर रही है। मैत्रेयी जी की नारी पात्राएँ अदम्य साहस का प्रतीक है। विषम परिस्थितियों से जूझना, जीवन के थपेड़े झेलना परंतु पराजय स्वीकार न करना इनका विशेष गुण है। संघर्ष करते हुए अपनी स्थिति को उत्तमता की ओर अग्रसर करने का उनका निरंतर प्रयत्न रहा है। मैत्रेयी जी नारी संबंधी धारणा को आधुनिक परिवेश में स्वीकृत करती है। उनकी नारी संबंधी विचार परंपरागत न होकर आधुनिक है। प्रगतिशील नारी हर प्रकार के घुटन को तोड़कर मुक्त हो जाना चाहती है। पराधीनता के संबंध में प्राण कैसे छटपटाते हैं इसका मनोवैज्ञानिक यथार्थ चित्रण मैत्रेयी ने अपने साहित्य में किया है।

मैत्रेयी जी ने अपने उपन्यास साहित्य के द्वारा नारी को जीवन पथ पर अग्रसर होने की महान प्रेरणा दी है। यदि नारी प्रगति पथ का अवलंबन नहीं करेगी तो पूरे समाज की प्रगति अवरुद्ध हो जाएगी। और इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए रूढ़ियों के जर्जर भवन पर लगातार प्रहार करना होगा। यह विचार मैत्रेयी को सदैव प्रेरित करता रहा है। मैत्रेयी जी ने नारी स्वतंत्रता का प्रबल समर्थन करते हुये भी उसकी उच्छृंखलता का कहीं अनुमोदन नहीं किया।

मैत्रेयी पुष्पा के अनुसार 'इदन्नमम्' की मंदाकिनी वास्तविक अर्थों में एक जुझारू युवती है। जो केवल परिवार और समाज द्वारा अपने लिए निर्मित बंधनों को ही नहीं तोड़ती वरन शोषण के विरुद्ध भी तनकर खड़ी हो जाती है। मंदा ऐसी नारी है जो स्त्री यातना को सहते हुये शोषितों एवं वंचितों की पीड़ा से एकात्य हो जाती है। घर, परिवार की देहरी लांघकर वह समाज की उस धुरी पर खड़ी होती है जहां स्त्री चेतना व दलित चेतना एकाकार हो कर जनतंत्र और विकास के सवालों से टकराने लगती है। लेकिन मंदा की यह भूमिका थोपी हुई क्रांतिकारी चेतना न होकर भारतीय समाज की नयी दिशाओं को तलाशती एक ऐसी स्वतः स्फूर्त चेतना है, जो मेघा पाटेकर, बाबा आमटे–हजारे और बी०डी० शर्मा के संघर्षों का स्मरण कराती है। वस्तुतः यह उपन्यास औरत होने की लड़ाई का उपन्यास है। प्रेमा, कुसुमा, सगुणा आदि नारी पत्रों में साहस और निरीहता का अद्भुत संयोग है तीनों पात्र इस कड़वी सच्चाई को प्रस्तुत करते हैं की समाज द्वारा निर्धारित मापदण्डों के विरुद्ध में साहसपूर्ण विकल्प का चयन उनके लिये अंततः कारुणिक और त्रासद अंत का चयन है। इस प्रकार हम देखते हैं कि मैत्रेयी जी की नारी पात्र अपने कर्तव्य पथ पर सतत गतिशील रहते हैं और पाठक को भी गतिशील रहने की प्रेरणा देते हैं। मैत्रेयी जी ने प्राचीन नैतिकता की मान्यता को स्वीकार नहीं किया है। क्योंकि नैतिकता कोई ऐसा वस्त्र नहीं, जो शरीर से चिपक कर रह जाये। नैतिकता के मापदंड युग परिवेश में परिवर्तित होते रहते हैं। स्त्री की स्वतंत्रा को नैतिक पराधीनता की बेड़ियों से जकड़ा नहीं जा सकता। नैतिकता के पुराने मापदंड खंडित होने ही चाहिये। ऐसा अंतःस्वर मैत्रेयी जी की नारी भावना से सबल रूप में ध्वनित हो रहा है।

स्वामी विवेकानंद का दृढ़ विश्वास था की जो देश और जाति स्त्री जाति की प्रतिष्ठा नहीं करती वह कदापि उन्नतिशील नहीं हो सकती उनका कथन था कि, "भारत में स्त्री जीवन से आदर्श का आरंभ और अंत मातृत्व में ही होता है। नारी के नारीत्व का पूर्ण विकास होने पर ही स्त्री को एक उच्च तथा आदरणीय स्थान प्राप्त हो सकता है। क्योंकि विश्व के समस्त दैवीय गुण और शक्तियाँ उस गृह समाज तथा राष्ट्र में विध्यमान रहता है जहां नारियों की पूजा होती है।" [15]

मैत्रेयी जी ने आज बदलते परिवेश में नारी को सजग रहने के लिए प्रेरित किया है। नारी को कहीं न कहीं यह आभास होता है कि किस जगह पर उसके साथ अत्याचार, घृणा एवं उपेक्षिता का व्यवहार किया जा रहा है। वह प्राचीन संस्कारों में जीना नहीं चाहती है क्योंकि प्राचीन संस्कार नारी को दमघोंटू एवं नाटकीय जीवन जीने की ओर अग्रसर करता है। मैत्रेयी जी ने नारी की समस्या को लेकर बहुत ज्यादा ही सजग और चेतस रही है। उनकी नारी विषयक दृष्टिकोण 'कस्तुरी कुंडल बसे' उपन्यास में स्पष्ट हो जाती है। स्त्री की सामाजिक हैसियत की पहचान मैत्रेयी पुष्पा अपने उसी परिवेश से करती है, लड़की की नियति यहाँ सब कहीं निशि और शकुन जैसी ही है। निशि तीन बहनें है बाप की सामाजिक हैसियत और आर्थिक सीमाओं के कारण उसका विवाह बेहोश करके एक दुहाजू से किया जाता है। बाद में वह आत्महत्या कर लेती है। अपने संभावित पति को ठहराने के लिए जो कमरा तय करती है, ऐन वक्त पर उसे नहीं मिलता है। फिर अपने औरत होने के रीति से शकुन मैत्रेयी को प्यार से 'बिन्ना' कहकर जो कुछ बताती सुनाती है वह सब औरत की जिंदगी का एक भयावह सच है। आदमी ही अपने औरत को वहाँ लाते हैं और उनकी रिहाई के दम पर क्लीनर और कंडक्टर बनते हैं। औरतों के बेहिसाब दुखों के आगे माँ का घूँघट– पर्दे का विरोध या शिक्षा के पक्ष में खड़ा होना उसे बहुत कम लगता है। इस घर न घी के चिराग जलाए जा सकते हैं, न ही इतराया जा सकता है।" [16]

मैत्रेयी जी मानती है की नारी की दयनीय स्थिति का मूल कारण उसका आर्थिक दृष्टि से पुरुष पर निर्भर रहना है, जब तक नारी

आर्थिक बंदीगृह से मुक्त नहीं होती तब तक नारी स्वतंत्रता की रक्षा करना व्यर्थ है। इसीलिए मैत्रेयी की नारी पात्राएँ आर्थिक आत्मनिर्भरता के लिए संघर्षरत कही जा सकती है। मैत्रेयी पुष्पा नारी स्वतंत्रता की प्रबल समर्थक रही है, उनका विचार है की नारियों का शोषण नहीं होना चाहिए, घर और बाहर की नारियों की स्वतंत्रता मिलनी चाहिए। पुरुषों को और नारी को स्वतंत्र स्तर पर प्रतिष्ठित करते हुये उनके व्यक्तित्व के विकास का यज्ञ पूर्ण करना चाहिए।

निष्कर्ष

कुल मिलाकर हम कह सकते हैं कि मैत्रेयी पुष्पा जी के उपन्यासों से यह बात साफ–साफ स्पष्ट दिखता है कि उनकी प्रवृति नारी पात्रों के चित्रांकन कि ओर विशेष रही है। अपने हृदय कि कोमलतम कल्पनाओं कि प्रतिछाया नारी पात्रों में देखने कि कोशिश करती हैं। वे नारी के व्यक्तित्व को संकुचित दृष्टि से नहीं देखती, सदियों से नारी पुरुष कि दासी के रूप में पीड़ित है जिससे उसका आत्मसम्मान लुप्त सा हो गया है। पुष्पा जी मानती है कि नारी में भी वही हौसला व उमंग किलकारियाँ मारती रहती है जो पुरुष में। अतः नारी को समान अवसर प्रदान करना होगा। तभी उसकी जीवन का यथार्थ सामने आ पाएगा, इसी चेतना को जागृत करने हेतु स्त्री–विमर्श भी अहम भूमिका निभा रही है और अंत में यह दो पंक्ति दृष्टव्य है–

नारी जब भी चुप रही है, तब दानवों का भार बढ़ा।
रूप लिए जब दुर्गा का, तब महिषासुर का संहार हुआ।।

संदर्भ सूची

1. मनुस्मृति, अध्याय 3/56
2. हजारी प्रसाद द्विवेदी : वाणभट्ट की आत्मकथा, पृष्ठ 110
3. महादेवी वर्मा : शृंखला की कड़ियाँ, पृष्ठ 11–12
4. मैत्रेयी पुष्पा : खुली खिड़कियाँ, पृष्ठ 19
5. मैत्रेयी पुष्पा : विजन, पृष्ठ 116
6. मैत्रेयी पुष्पा : कस्तूरी कुण्डल बसै, पृष्ठ 72
7. संपादक, दया दीक्षित, मैत्रेयी पुष्पा : तथ्य एवं सत्य, पृष्ठ 18
8. मैत्रेयी पुष्पा : चाक, पृष्ठ 43
9. वही, पृष्ठ 22
10. वही, पृष्ठ 22
11. मैत्रेयी पुष्पा : त्रिया हठ
12. हंस : जुलाई, 1998 पृष्ठ 110
13. वीरेंद्र यादव, बेटी के दर्पण में माँ– हंस, अगस्त 2002, पृष्ठ 88
14. हंस : अगस्त, 2000 पृष्ठ 90
15. विवेकानंद : भारतीय नारी, पृष्ठ 23–26
16. मैत्रेयी पुष्पा : कस्तूरी कुण्डल बसै, पृष्ठ 199–200